Gyanvividha, Vol.-2; Issue-2 (Apr.-June) 2025 : PP-103-106

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-2.25
Vol.-2; Issue-2 (Apr.-June) 2025
Page No.- 103-106
©2025 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

1. प्रियंका कुमारी
शोधार्थी, हिन्दी,
बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय,
मुजफ्फरपुर.

2. प्रो. सतीश कुमार राय
शोध-निर्देशक,
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय,
मुजफ्फरपुर.

Corresponding Author :

प्रियंका कुमारी
शोधार्थी, हिन्दी,
बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय,
मुजफ्फरपुर.

लक्ष्मीकांत वर्मा का कविकर्म : एक अनुशीलन

लक्ष्मीकांत वर्मा हिन्दी के बहुआयामी रचनाकार है। वे समर्थ कवि हैं, लोकप्रिय कथाकार हैं, सशक्त नाटककार हैं और महत्त्वपूर्ण आलोचक भी। इतना ही नहीं राजनीतिक लेखन और संपादन में भी उनकी दक्षता सर्वमान्य है। विचारधारा से वे समाजवादी हैं और उनका व्यक्तित्व एक आंदोलनकारी का व्यक्तित्व है। आंदोलन के क्रम में वे जेल भी जा चुके हैं। 'परिमल' के सदस्य के रूप में भी महत्ती भूमिका रही है। उनका लेखन स्वतंत्रता के पूर्व ही प्रारंभ हो चुका था, किन्तु उन्हें मान्यता मिली 1958 में प्रकाशित उनके उपन्यास 'खाली कुर्सी की आत्मा' से। उनका पहला काव्य संग्रह 'अतुकांत' 1968 में प्रकाशित हुआ। उसके पूर्व 1956 में विपिन कुमार अग्रवाल के साथ उनका साझा काव्य-संग्रह 'धुएँ की लकीरें' प्रकाशित हो चुका था।

'अतुकांत' का प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ से हुआ। इस संग्रह की कविताओं का प्रवृत्तिमूलक विश्लेषण करते हुए डॉ. राजकुमार शर्मा ने लिखा है-"लक्ष्मीकांत वर्मा ने मध्यवर्ग के अभाव भरे जीवन को प्रस्तुत किया है। यह प्रस्तुति इतनी सहज है कि घर गृहस्थी चौक-चूल्हे से जुड़ी सामान्य स्थितियाँ भी कविता के रूप में ढल गई हैं। मोटे तौर पर कविता-संग्रह की कविताएँ दो तरह की हैं। एक वे जो मध्यम वर्ग की आर्थिक विषमता, खीझ और असंगतियों को प्रस्तुत करती हैं दूसरी जो सामंती व्यवस्था के खिलाफ आवाज उठाती है। लक्ष्मीकांत वर्मा ने 'अतुकांत' के फ्लैप पर लिखा है, 'कविताएँ' कटुताओं और 'अपवादों की स्वीकृति होते हुए भी उनसे उबरने की स्थितियों हैं इसलिए पाठक पर उनका प्रभाव निषेधात्मक नहीं, बल्कि प्रतिषेधात्मक होता है। इन कविताओं में कवि ने अपने पूर्व कवियों के लिए शिल्प और कथ्य के प्रभाव से मुक्ति पाने का प्रयास करते हुए नए शिल्प की तलाश की है।

इस नयी तलाश में शिल्प में लड़खड़ाहट साफ दिखती है लेकिन यह अभिव्यक्ति पूरी अकृत्रिम तथा सहज है।"[1]

'अतुकांत' की कविताओं में कवि का गहरा यथार्थबोध है, कटाक्ष है, और आत्मबोध भी। इस संदर्भ में ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

"अरे यह महानगर है
जहाँ हैं सभी सभ्य
असभ्य केवल मैं हूँ
केवल मैं
क्योंकि मैं पिता हूँ
बन्धु हूँ। शक्ति हूँ। सहचर हूँ।"[2]

लक्ष्मीकांत वर्मा ने लघुमानव को अपनी कविता का विषय बनाया है। यह लघुमानव अपनी लघुता में भी विराट है, प्रबुद्ध है, क्रियाशील हैं-

"किसी महान का उच्छिष्ट मैं नहीं
किसी संभाव्य की अनुक्रमणिका नहीं
किसी समाप्ति का समापन चिह्न नहीं
मैं हूँ अपने ही लघु अस्तित्व से जन्मा
व्यापक परिवेश का साक्षी और साक्ष्य
प्रज्ञ। विज्ञ। आत्मस्थित। क्रियाशील
यथार्थवादी। निश्शंक। प्रबुद्ध
मेरी लघुता है परमाणुवाही सार्थकता
क्योंकि मैं अपना मैं ही नहीं
मैं तुम्हारा तुम सबका हूँ
आत्म स्थित। क्रियाशील।"[3]

अपनी लघुता पर गर्व करते हुए वे कहते हैं-

"मेरी लघु स्थिति में
वह सब कुछ है जो ऋजु है,
पावन है, मंगल है, शुभ है
किन्तु वह भी है जो रौख है,
गलित है, वीभत्स, कुरुप अपरुप है
वह भी है जो प्रत्येक क्षण
प्रलय की ओर बढ़ता क्षयी है
वह भी है जो चिर-विध्वंस में
एक मंगल सूत्र-सा अक्षय है।"[4]

'तीसरा पक्ष' 1975 में प्रकाशित काव्य-संग्रह है। इसकी भूमिका में उन्होंने लिखा है-"ये कविताएँ उस स्वर को व्यंजित करती हैं जिसमें व्यापक असंतोष, हिंसा और शोषण के विरुद्ध कवि-दृष्टि है। इनमें कवि-धर्म का निर्वाह करते हुए उस दुनिया की बात कही गई है जो कि लँगड़ी-लूली, टूटी-फूटी जर्जरित सी केवल अन्यायों के बीच जीने को मजबूर है।"[5]

1981 में इनका काव्य-संग्रह 'कंचनमृग' प्रकाशित हुआ। इसकी कविताएँ 'रामकथा' के विभिन्न संदर्भों से संबंद्ध हैं। इस संग्रह की कविताओं में कवि की मिथकीय चेतना स्पष्ट देखी जा सकती है। आज का हर आदमी राम बनकर कंचनमृग के पीछे भागता है। कंचनमृग कविता की ये पंक्तियाँ कितनी सार्थक हैं-

"तुमने कहा तपस्या में कंचन बाधक नहीं होता
मैंने स्वीकार किया
और नितांत वेश में तापस उदासीन
उस कंचन मृग के पीछे दौड़ गया।
मैं एक अंतहीन यात्रा की ओर
दौड़ता गया, दौड़ता गया
और हाँ, क्षितिज का उगना
एक नये की भूमिका बन
पर्त दर पर्त उघरता गया।"[6]

'चित्रकूट चरित' लक्ष्मीकांत वर्मा का खंडकाव्य है। इस खंडकाव्य में पुरानी कथा के माध्यम से युगीन व्यथा चित्रित हुई है। इससे राम से भरत के वन में मिलने की कथा है। कृति की भूमिका में कवि ने लिखा है-

"चित्रकूट चरित में राम के वैभव ऐश्वर्य में
न दीख पड़ने वालों पात्रों घटनाओं को जिसने दर्शाया
उस कवीश्वर कपीश्वर के प्रति नमन
शत शत नमन।"[7]

इस खंडकाव्य में लक्ष्मीकांत वर्मा का समाजवादी चिन्तनमुखर हुआ है। "चित्रकूट चरित का पूरा ताना बना राजनीतिक है, लेकिन उसकी संपूर्ण भाव-भूमि आध्यात्मिक है। यहाँ लक्ष्मीकांत वर्मा आध्यात्मिकता से सराबोर हैं। ऋषियों के वार्तालाप के माध्यम से भिन्न-भिन्न भारतीय दर्शनों को प्रस्तुत किया है। भाषा और भाव की दृष्टि से यह कृति लक्ष्मीकांत वर्मा को साहित्य का शिखर-पुरुष प्रमाणित करती है। रामायण की एक छोटी सी घटना इतने उच्च आदर्शों, काव्यात्मक तथा आध्यात्मिक ऊँचाई पर ले जाकर स्थापित किया है कि इस कृति ने काव्य की अद्वितीय कृति का रूप ले लिया है।"[8]

लक्ष्मीकांत वर्मा का काव्य-संग्रह 'दीप देहरी द्वार' 1997 में प्रकाशित हुआ। इसमें 100 कविताएँ हैं। इस संग्रह के संबंध में रामकमल राय का कथन है-'श्री लक्ष्मीकांत वर्मा का प्रस्तुत काव्य संकलन 'दीप देहरी द्वार' उनकी लम्बी, बीहड़, अतुकांत कविता का लगभग अंतिम पड़ाव हैं। उनका जीवन बहुत अव्यवस्थित बहुत असुरक्षित और संघर्षपूर्ण रहा है, किन्तु उनका कवि मन अत्यंत कोमल और संवेदनशील है। हर प्रकार की अनिश्चितताओं के बीच भी वह सदा सर्जना के नये द्वार खटखटाता रहा है। उनकी सृजनोन्मुखता उस बीज के अंकुरण जैसी है जिसे हजार प्रकार के कंकड़ पत्थर के बीच दबा-दिया गया है फिर उन्हीं के बीच के अंतराल से अंकुर, फूटता, पल्लवित और पुष्पित होता रहा है।"[9]

इस संग्रह की कई कविताओं में कवि का आत्मसंघर्ष है। वे कहते हैं-

"एक भूमिका लिखने की कोशिश में
मैं जीवन भर विषय ही ढूँढ़ता रहा
वस्तु की तलाश में भटकता रहा
और इत्यलम् तक नहीं पहुँचा।"[10]

इतना ही नहीं, इसमें समर्पण और निष्ठा की अभिव्यक्ति भी है-

"तुमने वंशी राधा को दे
समझा होगा राग मुक्त, स्थित प्रज्ञ
अनासक्त
सोचा नहीं तुमने
आज उस वेणु में राधा रिक्त है
जितना था राग, भाव आह्लाद
सब तो समर्पित कर दिया उसने तुम्हें
बचा क्या? केवल बाँसुरी तुम्हारी।"[11]

इस संग्रह की कविताओं में कवि का अकेलापन भी है और अपने समय संदर्भों की पहचान भी। वह कहता है-

"मुझे लगा मेरी तरह यह भी अकेला गया होगा
इसका भी न होगा कोई विरोधी होगा ना समर्थक
इसलिए इसका परिचय पत्र छीनकर
पक्षी बना दिया गया होगा
अब वह एक तिनका लिए वापस आ रहा है।
ताकि तिल का ताड़ बनाकर
समर्थकों और विरोधियों का जुलूस निकाले
जब गौर से देखा तो तिनके पर
राम नाम लिखा था
पक्षी परम शांत था।"[12]

लक्ष्मीकांत वर्मा की कविताओं में अपने समय की हर आहट की गूँज है। वे आज के संघर्षशील मनुष्य के पूरी त्रासदी को रेखांकित करती हैं। शाश्वत सत्य का संधान करते हुए वे लिखते हैं-

"त्रिशंकु हूँ मैं स्थितप्रज्ञ
अपराजेय अनासक्त योग हूँ
चिरन्तन शाश्वत सत्य

अपरिवर्तित अंकुर हूँ मैं
देश-काल से मुक्त
कभी नहीं बदलूँगा
अक्षय असत्य हूँ मैं
ओ अर्धविकसित
अनुकरण करो मेरा।"[13]

आज के अनुष्य की विडंबना को कवि ने इन पंक्तियों में कितनी गहराई से चित्रित किया है-

"जीवित रहो
जिन्दा रहो
ओ माँ....
सच मानो, मुझे दीमक नहीं छुएँगे,
नहीं पास आयेगी चींटी, चूहा,
नहीं कुरतेगा बहेलिये का कुत्त मुझे,
नहीं देखेगा कोई भी हिंसक
क्योंकि मैं मर कर जीवित अभिनव हूँ
केवल एक स्थिति हूँ
जिस पर रचना की देहली माथा टेक
हार मान सो जाती है।
इसलिये दो
ओ पयमती रसस्निग्ध ज्चारों की स्रोतस्विनी
इन सबको दो मेरा वह स्नेह,
जिससे मैं वंचित हूँ
क्योंकि मैं मुर्दा हूँ
केवल मुर्दा।"[14]

इस प्रकार साठोत्तर हिन्दी कविता को अर्थवत्ता और शिल्पगत वैशिष्ट्य देने वाले कवियों में लक्ष्मीकांत वर्मा अग्रगण्य हैं। उनका कविकर्म अपनी वैचारिकता, संवेदनशीलता और शिल्पगत चारुता के कारण विशिष्ट है। उनकी कविताओं में उनका समय बोलता हैं संघर्षशील मनुष्य की चेतना बोलती है, उनका समाजदर्शन मुखरित होता है। निःसंदेह समकालीन कविता के प्रारंभिक चरण को समुचित दिशा देने में उनकी भूमिका का ऐतिहासिक महत्त्व है।

संदर्भ-सूची :

1. लक्ष्मीकांत वर्मा, डॉ0 राज कुमार शर्मा, उत्तरप्रदेश, हिन्दी संस्थान लखनऊ, द्वितीय संस्करण, 2017, पृष्ठ संख्या-15.
2. यह महानगर है' शीर्षक कविता से 'अतुकांत', पृष्ठ संख्या-17.
3. 'अतुकांत', पृष्ठ संख्या-41.
4. आधुनिक कवि, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रथम संस्करण, 1975.
5. भूमिका, 'तीसरापक्ष', पृष्ठ संख्या-14.
6. कंचनमृग, पृष्ठ संख्या-12.
7. चित्रकूट चरित भूमिका- पृष्ठ संख्या-06.
8. लक्ष्मीकांत वर्मा, डॉ0 राम कुमार शर्मा, पृष्ठ संख्या-42.
9. अपनी बात, 'दीप देहरी द्वार', हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद, प्रथम सं0 1997, पृ0 सं0-07.
10. 'दीप देहरी द्वार', पृ0 सं0-25.
11. 'दीप देहरी द्वार', पृ0 सं0-105.
12. वही, पृष्ठ संख्या-105.
13. 'शाश्वत सत्य', नयी कविता- संपादक जगदीश गुप्त, रामस्वरुप चतुर्वेदी, विजयदेवनारायण साही, अंक-3, पृष्ठ संख्या-32.
14. 'मृत आत्मा की वसीयत', वही, पृष्ठ संख्या-34.

•